रघुवंश

रघुवंश

प्रथम संस्करण : एप्रिल, 1989

प्रकाशन : राज्य संदर्भ केन्द्र(प्रौढ़ शिक्षा),
7-ए झालाना संस्थान क्षेत्र,
जयपुर- 302 004

कीमत : रु. P 50

आवरण :

मुद्रक : लशर्स
प्रा. लि.,जयपुर

रघुवंश

महाराज दिलीप मनु के कुल में पैदा हुए थे। वह बहुत बलवान थे। वह बराबर धर्म के रास्ते पर चलते थे। इसलिए उनके चेहरे पर तेज था। साथ-साथ वह कुशल शासक और विद्वान भी थे। अयोध्या की प्रजा उन्हें पिता की तरह प्यार करती थी, लेकिन दुश्मन उनके दंड से डरते भी थे। मगध देश की कन्या सुदक्षिणा के साथ उनका विवाह हुआ था। राजा को सब सुख था, केवल संतान का सुख नहीं था। अंत में संतान की कामना से पति-पत्नी गुरु वसिष्ठ के आश्रम में पधारे। ध्यान में जाकर मुनि ने राजा को बताया कि किसी समय दिलीप ने सुरभि नामक कामधेनु का तिरस्कार किया था। उसी के शाप से उनके कुल में कोई बच्चा नहीं पैदा हो रहा है। उसी समय सुरभि की बछिया नन्दिनी वहां पहुंची। यह शुभ संकेत पाकर मुनि ने राजा से कहा कि उन्हें नन्दिनी की सेवा में हृदय से लग जाना चाहिए। उनकी कामना अवश्य पूरी होगी। राजा ने सिर झुका कर गुरु के आदेश को स्वीकार किया। वह आश्रम की कुटिया में ही रहने लगे।

राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा में दिन-रात लगे रहते थे। नन्दिनी चलती तो राजा पीछे-पीछे चलते। नन्दिनी बैठती तो वह भी पास बैठ जाते। राजा उसे मुलायम घास खिलाते, प्यास लगने पर पानी पिलाते। शाम को नन्दिनी जब आश्रम लौटती तो रानी उसकी पूजा-प्रदक्षिणा करती। राजा के सेवा-भाव की परीक्षा लेने के लिए एक दिन नन्दिनी शेर की मांद में चली गई। शेर ने उसे दबोच लिया। राजा ने शेर को मारना चाहा तो तीर-धनुष पर उनका हाथ सुन्न पड़ गया। शेर ने कहा कि वह शंकर का भक्त है इसलिए राजा उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। राजा ने कहा कि नन्दिनी के बदले वह उसका भोजन कर ले। शेर इस पर राजी हो गया। राजा ने हथियार रख दिया। अपना शरीर सामने कर दिया। परीक्षा में सफल उतरने पर नन्दिनी ने राजा को वर दिया कि उसे पुत्ररत्न प्राप्त होगा। वर पाकर राजा राजधानी लौट आये। कुछ दिनों के बाद रानी सुदक्षिणा गर्भवती हुई।

रानी सुदक्षिणा ने जिस पुत्र को जन्म दिया उसी का नाम रघु रखा। वन से आकर मुनि वसिष्ठ ने उसका संस्कार किया। रघु जब युवराज बनाये गये तो राजा दिलीप ने अश्वमेध यज्ञ किया। युवराज रघु की यह जिम्मेदारी थी कि वह अश्वमेध के घोड़ों की रक्षा करे। निन्यानवे यज्ञ बिना बाधा के पूरा हो गया। लेकिन सौवें यज्ञ के घोड़ों को इन्द्र ने रोक लिया। रघु ने इन्द्र से प्रार्थना की कि वह घोड़ों को छोड़ दें। इन्द्र ने कहा कि संसार में सौ यज्ञ करने वाले सिर्फ वही हैं। अगर राजा दिलीप भी सौ यज्ञ पूरा कर लेंगे तो उनका यश मिट जायेगा। इन्द्र के हठ को देखकर रघु को उनके साथ लड़ाई करनी पड़ी। रघु और इन्द्र में जमकर लड़ाई हुई। बाण और वज्र से आकाश छा गया। इन्द्र का एक वज्र रघु की छाती पर लगा। वह कुछ देर के लिए मूर्च्छित हो गया, लेकिन लड़ाई के लिए फिर उठ खड़ा हुआ। रघु के बल और साहस को देखकर इन्द्र का कोप शान्त हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर रघु को वर दिया। यज्ञ के बाद दिलीप ने राजकाज का भार रघु को सौंप दिया और खुद पत्नी सुदक्षिणा के साथ तपोवन चले गये।

रघु सिंहासन पर बैठे तो जैसे दुनिया नई हो गई। प्रजा खुश थी और दुश्मन परास्त थे। तब रघु ने दिग्विजय का डंका बजा दिया। पहले वह पूरब की ओर

बढ़े। कई प्रांतों को जीतते हुए वह बंगदेश पहुंचे और वहां गंगा के बीच कई द्वीपों पर अपना झण्डा फरहा दिया। फिर कपिशा नदी पर पुल बनाकर वह कलिंग देश की ओर बढ़े। लेकिन वहां के राजा को हरा कर उसका देश उसी को लौटा दिया। समुद्र के किनारे से आगे बढ़ते हुए काबेरी नदी को पार कर वह दक्षिण पहुंचे। मलयाद्रि पहाड़ के नीचे सेना ने डेरा डाला। यहां पांड्य जाति के लोग उनके प्रताप को सह नहीं सके। सह्यादि पहाड़ से होते हुए वह पश्चिम की ओर बढ़े। पश्चिमी देश के राजाओं और रघु के बीच भीषण लड़ाई हुई। अंत में वहां के लोगों ने रघु से शरण मांगी। रघु तब उत्तर की ओर मुड़े। सिंधु नदी के किनारे घोड़ों को सुस्ताकर उन्होंने हूण राजाओं से लड़ाई छेड़ी, फिर कम्बोज जीता, और हिमालय पर चढ़ाई की। आगे कैलास पर्वत को देखकर रघु वहां से नीचे उतरे और लौहित्य नदी को पार कर कामरूप पहुंचे। वहां भी उन्हें जीत मिली। राजधानी लौटकर रघु ने विश्वजीत यज्ञ किया जिसमें दूर-दूर के राजाओं ने हिस्सा लिया।

रघु ने विश्वजीत यज्ञ के दान में अपना सारा खजाना खाली कर दिया था। तभी वहां कौत्स पधारे। कौत्स वरतन्तु मुनि के शिष्य थे। शिक्षा समाप्त कर गुरुदक्षिणा के लिए राजा रघु के दरबार में पहुंचे। रघु ने मुनि और उनके आश्रम का हालचाल पूछा। उनकी तपस्या ठीक चल रही है? आश्रम के पेड़-पौधे, मवेशी, पोखरे सब ठीक-ठाक हैं? राजा ने पूछा वह कौत्स की क्या सेवा करें? कौत्स के लिये पानी सोने की जगह मिट्टी के बर्तन में आया था। यह देखकर वह भांप गया था कि राजा दान में सब कुछ गवां चुके हैं। इसलिए कौत्स ने कहा कि वह समय बीत चुकने के बाद पहुंचा है। यह कहकर वह चलने को उठा। राजा ने उन्हें रोककर पूछा कि वह अपनी जरूरत तो बतायें। कौत्स ने कहा उसे गुरुदक्षिणा के लिए 14 करोड़ मुद्रा चाहिए। रघु ने कौत्स को कुछ दिन रुकने के लिए कहा। उन्होंने संकल्प किया कि वह कुबेर से इस धन की मांग करेंगे। रथ सजाया गया और वह पोशाक पहनकर रात में रथ में ही सो गये जिससे सुबह उठ कर कुबेर के पास जल्दी जा सकें। उस रात खजाने में सोने की बारिश हुई। रघु ने सारा सोना कौत्स को दे दिया। खुश होकर कौत्स ने राजा को पुत्ररत्न का वरदान दिया।

रघु का बेटा अज कहलाया। बड़ा होकर वह पिता की तरह बलवान और विद्वान बना। इन्दुमती विदर्भ देश के राजा भोज की बहन थी। वह विवाह योग्य हो गई थी। राजा भोज ने युवराज अज के बारे में सुन रखा था। उन्होंने रघु के दरबार में एक दूत भेजा। दूत ने विवाह का प्रस्ताव रखा। रघु राजी हो गये। अज सैनिकों के साथ विदर्भ देश को चल पड़े। इन्दुमती के स्वयंवर में हर कोने से राजकुमार पहुंचे थे। मंडप सूर्यवंश और चंद्रवंश के रत्नों से जगमगा रहा था। इनमें मगध, अंग, अवन्ति, अनुप, सुरसेना, कलिंग और उरगा के राजकुमार थे। सबों के अपने अपने गुण थे। कोई वीर था, कोई विद्वान। किसी के डर से दुश्मन कांपते थे, किसी की उदारता प्रसिद्ध थी। किसी के पास रत्नों के खजाने थे तो कोई अपनी सेना के लिए जाना माना था। इन्दुमती ने एक-एक कर सबों की तारीफ सुनी। फिर भी वह किसी

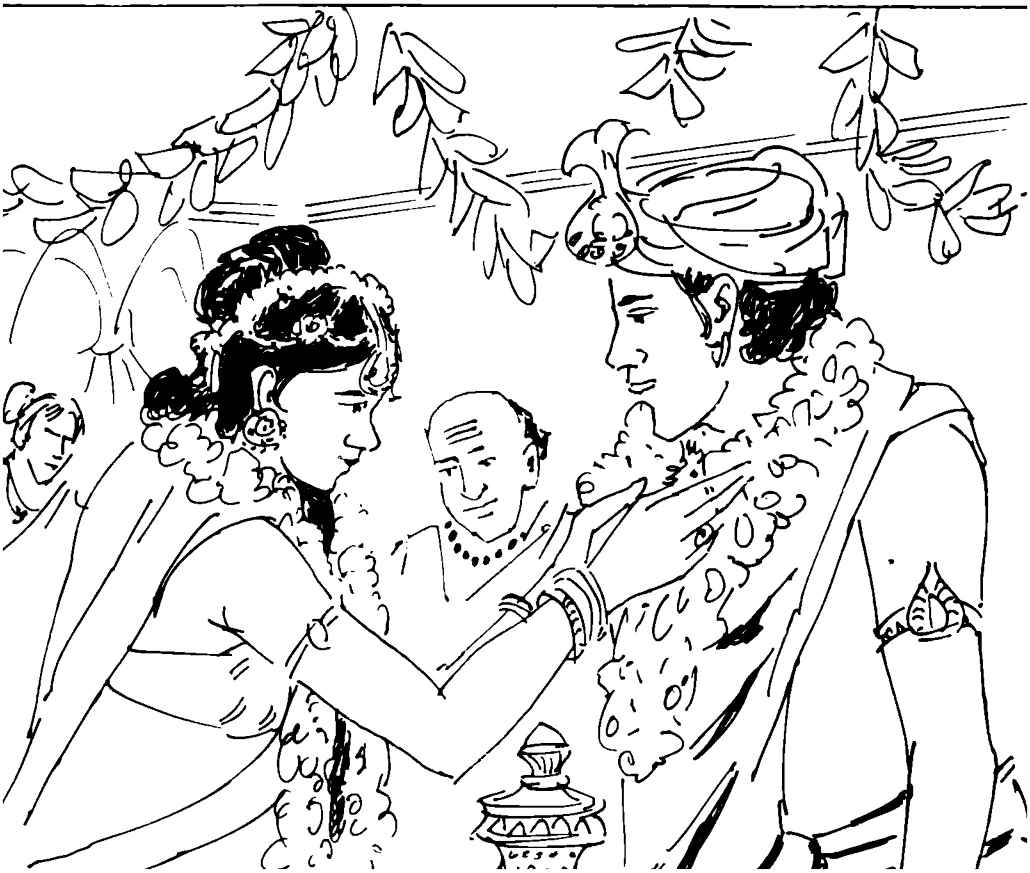

को पसंद नहीं कर सकी। अंत में वह राजकुमार अज के पास आई। इन्दुमती की सहेली पास ही खड़ी थी। उसने एक नज़र में ही भांप लिया कि अज इन्दुमती को पसंद आ गया है। सहेली अज का गुणगान करने लगी। कुल-परिवार, विद्या-यौवन, सभी गुणों से लैस अज के गले में माला डालकर इन्दुमती ने उन्हें स्वीकार किया। नगर के लोग वर-वधु को देखने उमड़ पड़े। निराश होकर भी और राजा लोग शांत रहे। शादी के बाद राजा भोज ने सभी राजाओं को भेंट दी, लेकिन वे उसे उपहार के रूप में वापिस कर राजधानी से विदा हो गये। दिग्विजय के समय अज के पिता रघु ने इन राजाओं को हराया था और कर वसूल किया था। सो जले भुने तो थे ही, अब इन्दुमती जैसी सुन्दर स्त्री को खोकर उनके मन में बदले की भावना सुलग उठी। कुछ दूर आगे जाकर उन्होंने रास्ता रोकने की साजिश की।

राजकुमार अज अपनी नववधू इन्दुमती को लेकर विदर्भ से चले। रास्ते में उन्हें साजिश की भनक मिली। उन्होंने इन्दुमती को मंत्री के जिम्मे लगाकर दुश्मनों पर हमला किया। लड़ाई में बराबर की टक्कर थी। पैदल पैदल से, घुड़सवार घुड़सवार से गुथ गये। धूल से सूरज ढक गया। मैदान खून से पट गया। सैनिकों के सिर फलों की तरह बिछ गये। कभी अज जीतते हुए लगते, कभी उनके दुश्मन। अज की सेना तितर-बितर हो गई। लेकिन अज खुद आगे बढ़ते गये। वह मैदान में अकेला चारों ओर के हमलों को झेलते रहे। कभी कभी अस्त्रों से इतना घिर जाते कि सिर्फ ध्वजा देखकर ही उनका पता चलता था। फिर उन्होंने सम्मोहन अस्त्र चलाया। इसका नतीजा यह हुआ कि दुश्मनों के हाथ धनुष पर टिके के टिके रह गये। बहुत सारे सैनिक घायल होकर ध्वजा के खम्भों पर लटक गये। राजा लोग मूर्च्छित हो गये। अज ने शंख फूंक कर विजय की घोषणा की।

रघु को अज की जीत का पता पहले ही चल चुका था। इसलिए जब अज राजधानी पहुंचे तो सबों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। सूर्यवंश की एक प्रथा थी। जब बेटा समर्थ हो जाता था तो पिता उसे राजकाज सौंपकर तपोवन चले जाते थे। रघु ने भी ऐसा ही किया।

सिंहासन पर बैठकर अज पिता की तरह ही इकबाली साबित हुए। उनके राज में हर जगह खुशहाली थी। अपने दुश्मनों के प्रति न तो वह ज्यादा कठोर थे, न ज्यादा मुलायम। वह बीच के रास्ते पर चलने में विश्वास रखते थे। रघु ने जब देखा कि अज हर तरह से सफल राजा बन चुका है तो उनकी स्वर्ग इच्छा भी जाती रही। नगर के बाहर वह योग-साधना में लीन रहने लगे। कुछ दिनों के बाद उन्होंने शरीर त्याग कर दिया। इसी बीच महारानी इन्दुमती मां बनी। राजा अज को पता था कि उनके बेटे का यश दसों दिशाओं में फैलेगा। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र का नाम दशरथ रखा।

एक दिन राजा अज रानी इन्दुमती के साथ नगर के बाहर बाग में छुट्टी मना रहे थे। उसी समय नारद मुनि आकाश से महादेव की पूजा करने जा रहे थे। उनकी वीणा पर एक फूलमाला थी। अचानक हवा का तेज झोंका आया और फूल उड़ा ले गया। फूल नीचे आया और ठीक रानी इन्दुमती की छाती के बीच गिरा। इन्दुमती ने चौंककर फूल की ओर देखा। फिर वह अचेत हो गई। गिरते हुए उन्होंने राजा अज को भी गिरा दिया। चारों ओर कुहराम मच गया। आतंक में चिड़िये भी चीख उठे। हवा करने पर राजा तो उठ बैठे, लेकिन रानी अचेत ही रही। वह मर चुकी थी। रानी को गोद में रखकर राजा विलाप करने लगे। अगर ईश्वर चाहे तो किसी को भी किसी चीज से मारा जा सकता है। अमृत विष हो सकता है, विष अमृत। आज मैं बिलकुल लुट गया। मेरा हंसी खेल खत्म हो गया। संगीत शांत हो गया। मेरी सेज खाली हो गई। अब तो केवल सांस लेते हुए जीना बचा रह गया है। देर तक राजा इसी तरह रोते-कलपते रहे।

इन्दुमती का श्राद्ध करके राजा अज दस दिनों के बाद राजधानी आये। वह बिलकुल मुरझा गये थे। इसी बीच उन्हें मुनि वसिष्ठ का संदेश मिला। मुनि ने कहलवाया था कि राजा अज को शोक नहीं करना चाहिए क्योंकि इन्दुमती की मौत तय थी। इन्दुमती पुराने जन्म में हरिणी नाम की अप्सरा थी। एक बार इन्द्र ने उसे तृणबिन्दु नाम के एक ऋषि के तप में खलल डालने के लिए भेजा। क्रोध में आकर ऋषि ने उसे शाप दिया कि वह मनुष्य लोक में जन्म लेगी। वह क्षमा मांगने लगी,

गिड़गिड़ाने लगी। ऋषि पिघल गये। उन्होंने कहा जिस दिन वह स्वर्गपुष्प का दर्शन कर लेगी उस दिन शाप-मुक्त हो जायेगी। वही अप्सरा धरती पर इन्दुमती नाम से पैदा हुई थी। मुनि का संदेश अज ने सुना। पर वह अपने शोक से उबर नहीं सके। उनका बेटा अभी बच्चा था, इसलिए आठ साल तक इन्दुमती का चित्र देखकर किसी तरह काटे। वह कमजोर होते जा रहे थे। वैद्यों को कोई उपाय सूझ नहीं रहा था। दशरथ जब बड़े हो गये तो अज ने राजकाज सौंप दिया। इसके बाद गंगा और सरयू के संगम पर जाकर उपवास करते हुए उन्होंने अपना प्राण त्याग दिया।

अपने शासन के शुरू में ही दशरथ ने उत्तर कौसल को अपने अधीन कर लिया। उनके राज में बीमारी का नामोनिशान नहीं था। लोग खुशहाल थे। यम की तरह वह किसी का पक्षपात नहीं करते, कुबेर की तरह सबों को दान देते और वरुण की तरह दुष्टों को सजा देते थे। उन्हें न तो शिकार का ज्यादा शौक था और न शराब का। वह कभी मजाक में भी झूठ नहीं बोले। अपने दुश्मनों के साथ भी क्रोध नहीं किया। अकेले ही दुनिया जीती, लेकिन दुश्मनों की विधवा पत्नियों और बच्चों की प्रार्थना पर समुद्र तट से अपनी राजधानी लौट आये। कौसल, केकय और मगध के राजाओं ने अपनी-अपनी बेटी दशरथ के हाथ सौंप दी।

अचानक स्वर्गलोक पर असुरों ने धावा बोल दिया। इन्द्र ने दशरथ की सहायता मांगी। दशरथ के हाथ असुरों को बुरी हार खानी पड़ी। तब दशरथ ने तमसा नदी के किनारे राजसूय यज्ञ का आयोजन किया। इतनी सफलताओं के बाद दशरथ का सिर इन्द्र के अलावा किसी के आगे नहीं झुकता था। बसंत आ रहा था और अशोक के पेड़ो पर नये पत्ते लग रहे थे। आम मजर रहा था, कोयल कूकने लगे थे। हर जगह प्रेम और जवानी का माहौल था। बसंतोत्सव के बाद राजा ने शिकार पर जाने की सोचा। राजा दशरथ के लिए शिकार नशा नहीं था। चलते निशानों पर रियाज करने और भागते जानवरों को परखने के लिए ही वह शिकार करते थे।

राजा के आने के पहले ही जंगल में शिकारी कुत्तों और रस्सियों का इंतजाम हो चुका था। आग और प्याऊ की व्यवस्था भी ठीक थी। राजा कई दिनों तक शिकार में लगे रहे। उन्होंने कई जंगली सूअर और शेर मारे। एक दिन हरिण का पीछा करते

हुए दशरथ दूर तक चले गये और अकेले पड़ गए। थक कर घोड़ा मुंह से झाग फेंकने लगा। उसे पानी पिलाने राजा तमसा नदी के किनारे आये। वहां उन्हें दूर से आती एक भारी आवाज सुनाई पड़ी। उन्होंने सोचा यह हाथी की आवाज है। असल में वह नदी से घड़े में पानी भरने की आवाज थी। क्षत्रियों के लिए हाथी का शिकार मना है, पर ख्वाहिश बढ़ जाने पर बुद्धि मारी जाती है। सो राजा दशरथ ने शब्दबेधी बाण चला दिया। उसके साथ ही "हा तात!" की दिल दहलाने वाली आवाज आई। राजा उधर को दौड़े। पहुंच कर देखा एक नौजवान तीर से घायल पड़ा है। उसका नाम श्रवणकुमार था। वह शूद्र तपस्वी का बेटा था। उसके मां-बाप अंधे थे। राजा उसे उठाकर उसके मां-बाप के पास ले गये। देह से तीर निकालते ही श्रवणकुमार की मौत हो गई। बूढ़े बाप ने दशरथ को शाप दिया कि मेरी तरह तुम

भी बुढ़ापे में पुत्र वियोग में मरोगे। शाप को सुनकर दशरथ को दुःख हुआ, लेकिन खुशी भी हुई। उनका कोई बेटा नहीं था। शाप सच हो इसलिए जरूरी था कि पहले उन्हें पुत्रधन प्राप्त हो। राजा ने अपने अपराध का दण्ड मांगा। तपस्वी ने कहा कि बेटे के साथ ही उसे और उसकी पत्नी को चिता में जलने का प्रबन्ध कर दें। वैसा राजा ने कर दिया। घर लौटते हुए राजा दशरथ का मन बहुत दुखी था।

दशरथ को राज करते हुए बहुत साल बीत गये पर उन्हें कोई बेटा नहीं हुआ। अपनी मनोकामना पूरी करने के लिए उन्होंने एक यज्ञ शुरू करवाया। यह वह समय था जब रावण के अत्याचार से देवता हाहाकार कर रहे थे। बचने का कोई उपाय नहीं देखकर देवतागण भगवान विष्णु की स्तुति करने लगे। विष्णु जानते थे कि रावण को ब्रह्मा का वर मिला हुआ है। ब्रह्मा ने रावण को वर दिया था कि उसे देवताओं से कोई भय नहीं होगा। रावण मनुष्य को तुच्छ समझता था, इसलिए उसने इस ओर से अभय वर की मांग नहीं की थी। विष्णु ने देवताओं को भरोसा दिया कि वह दशरथ के घर में जन्म लेकर रावण का वध करेंगे।

दशरथ का पुत्र-यज्ञ समाप्त हो चुका था। तभी एक दिव्य पुरुष सुनहरी कटोरी में चावल लेकर पहुंचा। उसने चावल को रानियों में बांट देने को कहा। चावल खाकर सभी रानियां समय पर मां बनीं। कौसल्या से जिस बेटे का जन्म हुआ उसका नाम राम रखा गया। कैकेयी के पुत्र का नाम भरत और सुमित्रा के जुड़वां बेटों का नाम लक्ष्मण और शत्रुघ्न रखा गया। राम और लक्ष्मण आपस में बहुत घुले-मिले थे। उसी तरह भरत और शत्रुघ्न साथ-साथ रहते थे।

राम अभी बच्चे ही थे कि ऋषि विश्वामित्र पधारे। उन्होंने दशरथ से कहा कि यज्ञ में राक्षस उत्पात मचाते हैं। रक्षा के लिए उन्होंने राम की मांग की। दशरथ का मन तो नहीं था लेकिन विश्वामित्र को कैसे नकारें? इसलिए उन्होंने राम और लक्ष्मण को उनके साथ कर दिया। रास्ते में ही ताड़का नाम की राक्षसी मिली जिसे राम ने एक तीर से ही मार दिया। दोनों राजकुमार आश्रम आये। यह वही आश्रम था जहां महादेव ने कामदेव को जलाकर राख कर दिया था। यहां राम-लक्ष्मण राक्षसों से मुनि की रक्षा करने लगे। यज्ञ के समय उन्होंने सुबाहु के साथ कई राक्षसों का खात्मा किया।

मिथिला के राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता के स्वयंवर में अतिथि रूप में विश्वामित्र को भी न्योता भेजा था। स्वयंवर का यह नियम था कि जो राजकुमार शिवधनुष को तोड़ेगा सीता उसी की होगी। विश्वामित्र जाने लगे तो राम-लक्ष्मण भी साथ हो लिए। उन्हें धनुष देखने की बहुत ललक थी। यज्ञ खत्म होने पर जब राजा जनक ने राम की इच्छा सुनी तो वे दुखी हो गए। राम का इतना कोमल शरीर और दूसरी ओर शिव का इतना भारी धनुष। विश्वामित्र ने जनक से कहा कि राम की कोमलता से उसकी ताकत का अंदाज न लगायें। तब जनक राजी हो गये। राम ने धनुष को सहज भाव से पकड़ा और उस पर तीर चढ़ा दिया। तीर खींचते ही धनुष इस आवाज से टूटा कि तपस्या में लीन क्रोधी मुनि परशुराम का ध्यान टूट गया। मानो यह सूचना थी कि क्षत्रियवंश फिर से जीवित हो उठा है।

राम के पराक्रम से खुश होकर राजा जनक ने दशरथ के पास अपना दूत भेजा। दूत ने संदेश दिया कि जनक अपनी बेटी के लिए राम की मांग कर रहे हैं। दशरथ कन्या की तलाश में तो थे ही, सो उन्होंने प्रस्ताव मान लिया। वह अपनी सेना के साथ जनकपुरी आये। धूमधाम के साथ राम-सीता का विवाह हुआ। राम का सीता से, उसकी छोटी बहन उर्मिला का लक्ष्मण से, और माण्डवी और श्रुतिकीर्ति का भरत और शत्रुघ्न से विवाह हुआ।

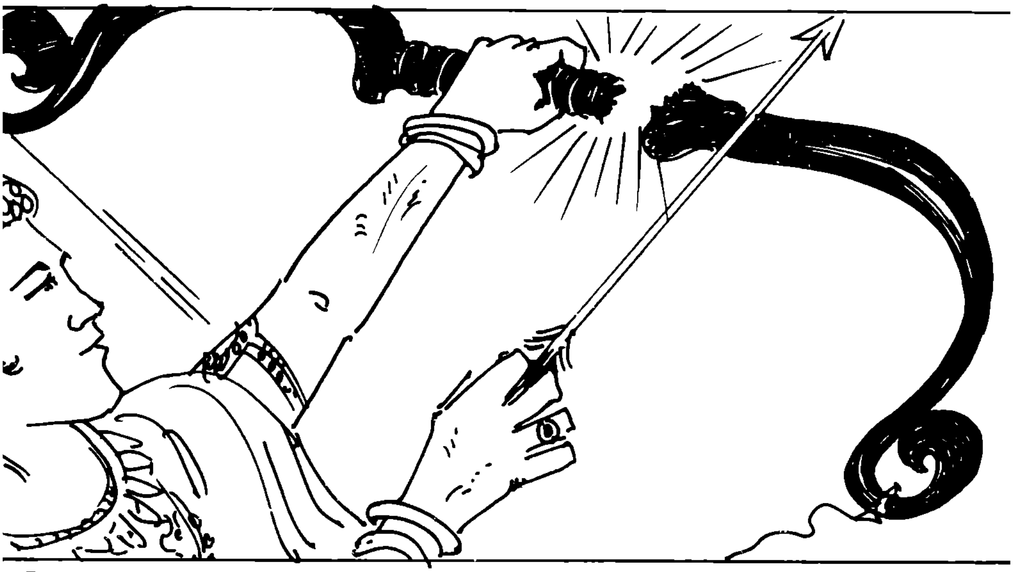

महाराज दशरथ अपने बेटों और उनकी पत्नियों को लेकर अयोध्या लौट रहे थे। रास्ते में आंधी-तूफान आ गया। चारों ओर अंधेरा छा गया। सूरज के पास सांप की तरह धारियां पड़ गईं। गीदड़ भौंकने लगे। तभी आकाश में परशुराम प्रगट हुए। परशुराम ने क्षत्रियों को इक्कीस बार हराया था। उन्होंने जब सुना कि राम ने शिव-धनुष तोड़ डाला है तो वे क्रोध से तिलमिला उठे। उन्होंने धनुष पर तीर चढ़ाकर राम से कहा—क्षत्रियों ने मेरे पिता की हत्या की थी इसलिए वे मेरे दुश्मन हैं। धनुष तोड़कर तुमने मेरा यश छीन लिया है क्योंकि मेरे नाम की तरह तुम्हारा नाम भी राम है। अगर तुम इतने ही वीर हो तो मेरे धनुष पर तीर चढ़ा कर देखो। परशुराम की चुनौती सुनकर राम मुस्कराये और उनके हाथ से धनुष ले लिया। उस पर बाण चढ़ाकर राम ने कहा—आप ब्राह्मण हैं। आपने मेरा अपमान किया है। फिर भी मैं आप पर हमला नहीं कर सकता। लेकिन मेरा बाण खाली नहीं जा सकता। अब आप बताइये कि मैं इसे कहां चलाऊं। परशुराम ने कहा—भगवन्, मैं आपके स्वरूप को जानता हूं। मैं मानव शरीर में विष्णु के तेज को प्रत्यक्ष देखना चाहता था, इसलिए मैंने आपको ललकारा। भगवन्, मैं पुण्य तीर्थों में भ्रमण कर सकूं इसलिए वह रास्ता रहने दीजिए। लेकिन स्वर्ग से मैं उदासीन हो गया हूं। इसलिए इस बाण को स्वर्गद्वार पर चला दीजिए। राम ने वैसा ही किया। तब से परशुराम के लिए स्वर्ग का रास्ता बराबर के लिए बन्द हो गया। परशुराम ने कहा अब वह कभी हथियार नहीं उठायेंगे। उनके जाने के बाद दशरथ ने राम को गले से लगाया। सब खुशी-खुशी अयोध्या आये।

दशरथ पर बुढ़ापा छाने लगा था। राम को गद्दी पर बिठाये जाने की तैयारी होने लगी। लेकिन कैकेयी के मन में खोट था। किसी समय दशरथ ने उसे दो वर दे रखे थे। इसलिए कैकेयी ने पहला वर मांगा कि राम को चौदह सालों के लिए वनवास दे दिया जाय। दूसरे वर में उसने मांगा कि भरत को गद्दी पर बिठाया जाय। दशरथ को वर का पालन करना पड़ा। बनवास की आज्ञा को राम ने खुशी-खुशी स्वीकार किया। सदमें से दशरथ की मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय उन्हें श्रवणकुमार की घटना याद आई। उस समय भरत ननिहाल में थे। दशरथ मर चुके

थे, राम जा चुके थे। राम के साथ सीता और लक्ष्मण भी चले गये थे। ऐसे समय में राज्य के दुश्मनों का मन बढ़ने लगा था। भरत को जल्दी अयोध्या बुलाया गया। अपने परिवार की घटना सुनकर भरत खिन्न हो गये। उनका मन मां कैकेयी और राज दोनों से उखड़ गया। वह राम के पीछे भागे। राम उस वक्त चित्रकूट में थे। भरत ने उन्हें मनाने की कोशिश की। लेकिन राम पिता की आज्ञा तोड़ नहीं सकते थे। तब भरत ने कहा—जब तक आप लौट नहीं आते सिंहासन पर आपका खड़ाऊ रहेगा। राम ने अपना खड़ाऊ भरत को दे दिया। भरत को लौटाकर राम और आगे बढ़े। उन्हें डर था भरत कहीं फिर न आ जाये। राम दक्षिण की ओर बढ़े। रास्ते

में एक राक्षस सीता को उठाकर भागने लगा, लेकिन राम और लक्ष्मण ने उसे मारकर जमीन में गाड़ दिया। कुछ दूर आगे चलकर वे पंचवटी पहुंचे और वहां आश्रम बनाकर रहने लगे। वहां रावण की बहिन शूर्पनखा आई और सीता के सामने ही राम को रिझाने लगी। राम ने कहा वह विवाहित हैं इसलिए उसे लक्ष्मण के पास जाना चाहिए। शूर्पनखा लक्ष्मण के पास गई पर उन्होंने भी उसे ठुकरा दिया। वह फिर राम के पास आई। इस पर सीता को हंसी आ गई। फिर तो शूर्पनखा के क्रोध का क्या कहना! अपना सूप सा नाखून फैलाकर उसने सीता पर हमला कर दिया। लेकिन लक्ष्मण ने अपने तलवार से उसका नाक काट लिया। वह भागकर जनस्थान चली गई। वहां खर और दूषण जैसे हजारों राक्षसों को जुटाकर राम पर हमला करवा दिया। राम ने सबों को अकेले जमीन पर सुला दिया।

रावण ने जब अपनी बहन की बेइज्जती सुनी तो वह बौखला उठा। उसने छल से सीता को हर लिया। रास्ते में जटायु ने उसे रोका तो उसे घायल कर दिया। राम जब सीता को खोजते हुए आये तो जटायु ने ही सारा किस्सा बताया। रास्ते में राम ने बालि को मारा। बालि सुग्रीव का बड़ा भाई था। उसने सुग्रीव का राज्य और स्त्री छीन लिया था। बालि के मरने पर सुग्रीव को सब वापस मिल गया था। सुग्रीव ने चारों ओर अपने दूत फैला दिये थे। मारुति ने आकर समाचार दिया कि रावण ने सीता को हरा है। हनुमान समुद्र तैरकर लंका गये और सीता से मिले। सीता को देने के लिए राम ने एक अंगूठी दी थी। हनुमान ने जब वह अंगूठी दी तो सीता को रोना आ गया। निशानी के रूप में सीता ने भी एक अंगूठी दी। हनुमान ने उसे लाकर राम को दी। अब राम लंका पर चढ़ाई करने की तैयारी करने लगे। समुद्र किनारे उन्हें रावण का भाई विभीषण मिला। राम ने उसे भरोसा दिया कि रावण को मार कर लंका का राज्य उसे दे दिया जायेगा। वानरों की सहायता से समुद्र पर पुल तैयार करवाया गया। सेना के साथ राम लंका की ओर बढ़े। सैनिकों ने लंका को घेर लिया। जमकर लड़ाई हुई। रावण का बेटा मेघनाद बड़ा लड़ाकू था। उसने लक्ष्मण को मूर्च्छित कर दिया। लक्ष्मण की हालत देखकर राम भी बैचेन हो गये। लेकिन हनुमान पहाड़ से जड़ी-बूटी लाकर लक्ष्मण को होश में लाया। लड़ाई में फिर

उतरकर लक्ष्मण ने मेघनाद का वध कर दिया। फिर आया रावण का भाई कुम्भकर्ण। पहले सुग्रीव ने उसका नाक-कान काटा। फिर राम ने अपने बाण से उसे सदा के लिए सुला दिया।

अब तो रावण तिलमिला उठा। रावण रथ पर आया, राम पैदल थे। यह देखकर इन्द्र ने राम के लिए रथ और कवच भेजा। रावण मामूली राक्षस नहीं था। वह शिव का भक्त था, वीर और विद्वान था। रावण के प्रति राम के मन में भी आदर था। लड़ाई शुरू हुई। हमले पर हमला होता रहा। रावण ने फौलादी हमला किया, राम ने उसे हंसुये जैसे वाण से काट दिया। जीत कभी इस ओर जाती, कभी उस ओर। पर राम से बड़ा धनुषधारी कौन था। अंत में उन्होंने ब्रह्मास्त्र छोड़ा। आकाश में जाकर वह बाण हर तरफ फैल गया। रावण के दसों सिर दसों दिशाओं के कट गये। वे सिर कटकर भी देर तक चमकते रहे। रावण के वध से प्रसन्न होकर देवताओं ने राम पर फूलों की वर्षा की। लड़ाई खत्म होने पर सीता ने अग्नि परीक्षा दी। राम ने लंका का राज्य विभीषण को दे दिया। इसके बाद राम सीता और लक्ष्मण के साथ पुष्पक विमान पर बैठकर अयोध्या के लिए रवाना हो गये।

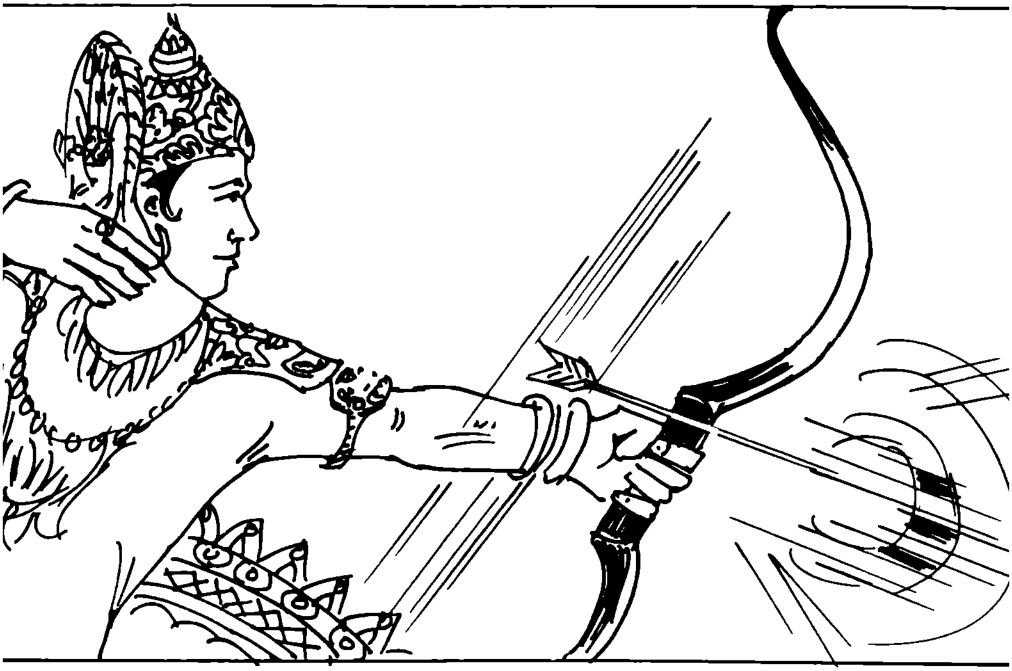

आयोध्या लौटते हुए उन्हें रास्ते में फिर वे जगहें मिलीं जहां राम ने डेरा डाला था। वह सीता को समुद्र, पहाड़, नदी, पेड़ पौधों के बारे में बताते चल रहे थे—वह देखो, यही वह जगह है जहां मुझे तुम्हारे पैर का एक नुपुर मिला था। और वही जगह है जहां से रावण तुम्हें भगा ले गया था। वह पंचवटी का आश्रम है। यहीं तुम आम के पेड़ों में पानी डाला करती थीं। और वह चित्रकूट पहाड़ है। पास ही मन्दाकिनी नदी बह रही है। वह है अत्रि मुनि का आश्रम। वह आगे गंगा-यमुना का संगम है। सीते, यह ब्रह्मसर आ गया। इसके आगे अयोध्या के पास बहने वाली सरयू नदी है। इसी के किनारे हमारे कुल के लोग यज्ञ करते आये हैं। और अब तो बिलकुल साफ दिखाई दे रहा है। गुरु वसिष्ठ आगे हैं, उनके पीछे सैनिकों की कतार है। बीच में मंत्रियों के साथ भरत हैं।

पुष्पक विमान धीरे-धीरे जमीन पर उतर आया। रास्ता दिखाते हुए सबसे पहले विभीषण उतरे। सुग्रीव ने सबों को हाथ का सहारा दिया। उतरते ही राम ने सबसे पहले वसिष्ठ को पैर छूकर प्रणाम किया। फिर भरत को गले लगाया। भरत ने सुग्रीव और विभीषण की चरण धूलि ली। तब भरत के साथ राम फिर पुष्पक विमान पर चढ़ गये और अयोध्या पहुंचे। वहां पूजा की सामग्री लेकर शत्रुघ्न पहले से ही खड़े थे।

अयोध्या में राम और लक्ष्मण ने माताओं को पैर छूकर प्रणाम किया। वे दुख और वियोग से टूट गई थीं। लेकिन बेटों को देखकर फिर से हरी हो गई। कैकेयी लाज से बाहर नहीं निकल रही थीं लेकिन राम ने अन्दर जाकर उन्हें भी प्रणाम किया। फिर जोर-शोर से राम को सिंहासन पर बिठाने की तैयारी शुरू हुई। राजा बनकर राम दिन-रात प्रजा के पालन में लगे रहते थे। कुछ दिनों के बाद सीता मां बनीं। गर्भधारण के बाद उनकी इच्छा हुई कि वह कुछ समय गंगा के किनारे कुशवन में बितायें।

एक दिन राम ने अपने गुप्तचर भद्र से पूछा कि प्रजा उनके बारे में क्या सोचती है। चुप रहकर भद्र ने टालने की कोशिश की। जोर देने पर भद्र ने बताया कि प्रजा के मन में राम के लिए प्रशंसा ही प्रशंसा है। सिर्फ एक बात की शिकायत है। वह

कहती है कि राक्षस के घर में रह आई सीता को आपने अपना लिया है। यह सुनकर राम का दिल टूट गया। सीता के चरित्र पर कोई अंगुली उठा सकता है इसकी कल्पना भी उन्हें नहीं थी। उनके सामने धर्म संकट खड़ा हो गया। वह जानते थे सीता पवित्र है। लेकिन प्रजा के मन में बैठे संदेह को वह कैसे मिटाएं। अन्त में उन्होंने तय किया कि वह सीता का परित्याग कर देंगे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि वह सीता को वाल्मीकि मुनि के आश्रम पर रख आयें। रथ तैयार हुआ। सीता यही समझ रही थी कि राम ने उसके तपोवन जाने की इच्छा पूरी की है। लेकिन गंगा पार कर चुकने के बाद जब लक्ष्मण ने राम की आज्ञा सुनाई तो सीता बेहोश हो गई। होश आने पर वह अपने भाग्य को कोसने लगी। फिर भी राम के प्रति उसके मन में कोई कटुता नहीं थी। समझा-बुझा कर लक्ष्मण ने सीता को वाल्मिकी के आश्रम का रास्ता दिखला दिया। सीता से क्षमा मांग कर लक्ष्मण लौट गये। सीता फूट-फूटकर रोती रही।

कुश और जलावन चुनते हुए उधर से वाल्मीकि गुजर रहे थे। किसी स्त्री का विलाप सुनकर वह उधर आये। मुनि ने सीता को देखते ही पहचान लिया। आशीर्वाद देकर मुनि ने कहा—मैं जानता हूं तुम्हारे ऊपर लगाया गया कलंक झूठ है। तुम दुख मत करो। मेरे आश्रम में चलो। यही समझो कि वह तुम्हारे पिता का घर है। तुम्हारे जब बच्चे होंगे तो हम वहीं उसे पालेंगे। सीता मुनि के साथ तपोवन चली आई। वह अतिथि सेवा और आश्रम की देख-रेख करने लगी। जब सीता को पता चला कि उसका परित्याग करके भी राम ने दूसरी शादी नहीं की तो उसका पति वियोग और बढ़ गया।

राम पूरे मन से राजकाज में लगे रहे। यमुना के किनारे तप करने वाले मुनियों को लवण नाम का राक्षस तंग कर रहा था। उसे मारने के लिए राम ने लक्ष्मण को भेजा। रास्ते में वाल्मीकि का आश्रम पड़ता था। रात भर के लिए लक्ष्मण मुनि के आश्रम में रहे। उसी रात सीता ने दो राजकुमारों को जन्म दिया। मुनि ने उनका नाम कुश और लव रखा। बड़े होने पर उन्हें पढ़ाया लिखाया। उसी समय वाल्मीकि ने रामायण की रचना की। उसे लव और कुश को याद करा दिया। बेटों के मुंह से रामायण सुनकर सीता अपना दुख भूल जाती थी। लवण राक्षस को मारकर लक्ष्मण अयोध्या लोटे। उन्होंने राम को सब कुछ बताया, लेकिन बेटों के जन्म के बारे में कुछ नहीं बताया। मुनि का यही आदेश था।

राम ने अब अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। अयोध्या में मुनियों और राजाओं की भीड़ लग गई। इसी अवसर पर वाल्मीकि लव-कुश को लेकर अयोध्या पहुंचे। दोनों भाई रामायण गाते हुये अयोध्या नगरी में घूमने लगे। उनके करुण संगीत को सुनकर लोगों की आंखें भर आईं। सबों ने देखा कि इन बच्चों का मुंह बिलकुल राम की तरह था। वाल्मीकि ने राम से लव और कुश के बारे में सब कुछ बता दिया। उन्होंने कहा कि राम सीता को ग्रहण करें। राम ने मुनि से कहा कि उनके मन में सीता के प्रति कोई संदेह नहीं है। लेकिन प्रजा उस पर विश्वास नहीं करती है। इसलिए जानकी को सबों के आगे परीक्षा देनी होगी। मुनि ने आश्रम से सीता को बुलवा लिया और उससे कहा बेटी, प्रजा के संदेह को दूर करो। सीता ने प्रार्थना

की—हे मां धरती यदि मैंने मन, वचन और कर्म से राम के अलावा किसी पुरुष से सम्पर्क न किया हो तो मुझे अपनी गोद में छिपा ले। इतना सुनते ही धरती फटी और सीता उसमें समा गई। यज्ञ के बाद यम ने राम को ब्रह्मा का संदेश सुनाया। उन्हें स्वर्ग में वापस बुलाया गया था। उत्तर में हनुमान और दक्षिण में विभीषण को बिठाकर राम स्वर्ग चले गये।

कुश सभी भाइयों में बड़े थे, इसलिए राम के बाद रघुकुल का राज कुश को ही मिला। वह कुशावती में रहकर शासन करते थे। एक दिन एक अनोखी घटना घटी। कुश कमरे में लेटे थे। आधी रात थी। तभी एक योगिनी जैसी स्त्री कुश के कमरे में आई। उसने कुश से कहा—मैं अयोध्या नगर की देवी हूं। राम के जाने

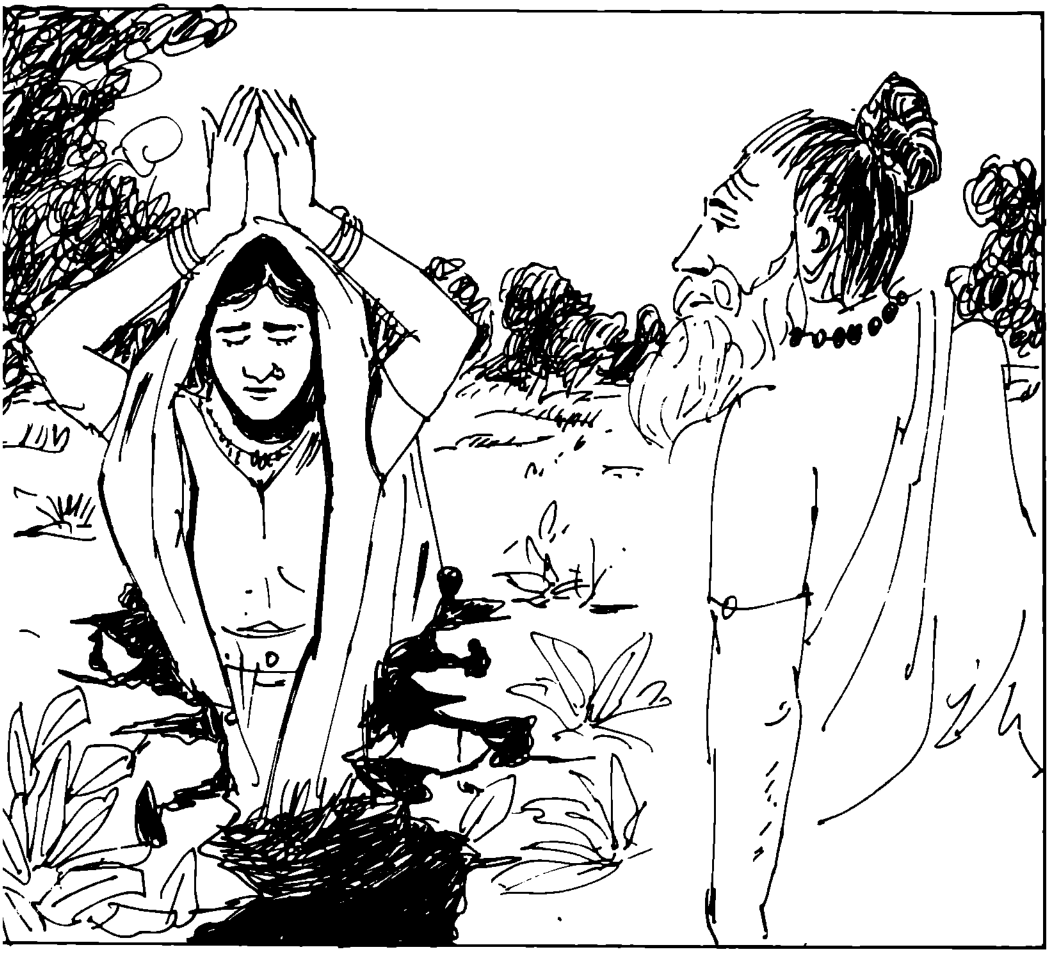

से अयोध्या सूनी और उजाड़ हो गई है। जिन सड़कों पर औरतों के कंगन छनकते थे वहां सियार भौंक रहे हैं। घरों के पलस्तर झड़ने लगे हैं। इसलिए तुम कुशावती को छोड़कर अयोध्या आ जाओ। कुश राजी हो गये और साजे-बाजे के साथ अयोध्या आ गये। एक दिन कुश अपनी प्रेमिकाओं के साथ सरयू नदी में क्रीड़ा कर रहे थे। नहाने के बाद उन्होंने देखा कि राम का दिया हुआ हार नदी में गिर गया है। मछुआरों ने डुबकी लगाकर उसे खोजा पर हार नहीं मिला। क्रोध में कुश ने गरुड़ास्त्र तान लिया। तुरंत ही सर्पराज कुमुद हार लेकर हाजिर हो गये। सर्पराज ने क्षमा मांगी। उनकी बहन कुमुदवती ने गलती से हार रख लिया था। हार लौटाकर सर्पराज ने कुश को अपनी बहन कुमुदवती भी भेंट कर दी।

कुमुदवती से अतिथि नामक पुत्र पैदा हुआ। एक बार एक दैत्य से इन्द्र को बचाने में कुश की मृत्यु हो गई हालांकि दैत्य भी कुश के हाथ मारा गया। फिर राजगद्दी पर अतिथि बैठे। इस अवसर पर अतिथि ने सभी कैदियों को रिहा कर दिया। अतिथि बहुत दयावान् थे। उन्होंने बैलों पर अधिक बोझ लादने की मनाही की। वह बहुत हंसमुख थे, और घमण्ड तो उन्हें छू तक नहीं पाया था। अश्वमेध यज्ञ पूरा कर वह सम्राट अतिथि बन गये। अतिथि के बेटे का नाम निषिध था। निषिध को गद्दी पर बिठा अतिथि स्वर्गलोक चले गये। निषिध ने भी काफी सालों तक राज किया। उनके बाद उनका लड़का नल गद्दी पर बैठा। नल से लेकर सुदर्शन के बीच कई राजा हुए जिनमें पुण्डरीक, अहीनग्र, हिरण्यनाभ, आदि का नाम महत्त्वपूर्ण है। सुदर्शन अभी बच्चे ही थे कि उनके पिता ध्रुवसंधि को एक शेर ने मार दिया। मंत्रियों ने सुदर्शन को बचपन में ही गद्दी पर बिठा दिया। राजा सुदर्शन का बहुत नाम हुआ। वह धनुष-बाण में माहिर थे और विद्वान भी थे। बुढ़ापे में अपने बेटे अग्निवर्ण को गद्दी सौंपकर सुदर्शन जंगल चले गये।

अग्निवर्ण कुछ दिनों में ही राजकाज से ऊब गये। सब कुछ मंत्रियों के हाथ छोड़कर वे विलास में डूब गये। वह दिन-रात औरतों के साथ उत्सव मनाने में लगे रहते थे। प्रजा के लिए उनके पास समय ही नहीं होता। दर्शन देने की बात आती तो खिड़की से एक पैर बढ़ा देते। लोग पैर की पूजा करके ही लौट जाते। नाच-गान,

शराब-औरत, बस यही उनकी जिन्दगी रह गई थी। अपनी रानियों के लिए भी उनके पास समय नहीं होता था। दूसरे राजाओं को पता था कि अग्निवर्ण रागरंग में डूबे हैं। लेकिन रघुकुल का बहुत रौब था, इसलिए चढ़ाई करने की हिम्मत कोई करता नहीं था। अंत में उनकी हार अपने आप हुई। उनका चेहरा पीला पड़ने लगा। वजन कम होने लगा। राजयक्ष्मा रोग ने उन्हें धर दबाया। रघुकुल की ऐसी अवस्था आ गई थी जैसे बुझता हुआ दीपक। अग्निवर्ण का कोई बेटा भी नहीं था। लेकिन जब वह मरने को आये तब मंत्रियों ने पाया कि रानी गर्भवती है। अग्निवर्ण की मृत्यु के बाद रानी गद्दी पर बैठी। मंत्रियों की मदद से वह शासन करती थी। हर कोई रघुकुल के नये दीपक की आस में बैठा था।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्रकाशन

राज्य संदर्भ केन्द्र
राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति,
7-ए झालाना संस्थान क्षेत्र
जयपुर-302 004